05 बच्चों के विकास में कलाओं की भूमिका



दीपशिखा खैतान

एक आम–साधारण इन्सान के लिए कला का अर्थ है एक पत्रिका में तसवीर या पोस्टर या कैनवस। लेकिन यह तो बस एक चित्र या आकृति है, असल में कला इससे बहुत अधिक कुछ है।

कला क्या है?

कला बहुइन्द्रीय आयाम को शामिल करता हुआ एक सम्पूर्ण सदृश्य अनुभव है। अपनी समझ और सुविधा के लिए अगर इसे इसमें शामिल विभिन्न इन्द्रियों में विभाजित कर लें तो हम निम्नलिखित अनुभवों की बात कर रहे होंगे:

1. आँखों के माध्यम से देखने का अनुभव।
2. देखे हुए को फिर से प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक हाथ और आँख के यांत्रिक सामंजस्य का अनुभव।
3. बोधात्मक अनुभव जिसके चलते हम इस छवि को टुकड़ों में बाँटकर वस्तु के रूप, आकार, रंग, विषय को समझ पाते हैं।
4. एक चित्र को देखकर होने वाली व्यक्तिगत प्रतिक्रिया का भावनात्मक अनुभव–और इसी से हम एक उत्कृष्ट चित्र को मामूली चित्र से अलग करके देख पाते हैं। जब सामूहिक स्तर पर एक कृति के प्रति सबकी प्रतिक्रिया एक–सी होती है तब वह "मोनालिसा" बन जाती है।

कला में मेरी दिलचस्पी 1995 से है जब मैंने पहली बार औपचारिक तौर पर इसे विषय के रूप में पढ़ना शुरू किया। तब आइ.सी.एस.ई. परीक्षाओं में बैठने के लिए कला को एक विषय के रूप में चुनने का विकल्प दिया गया था।

स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद मैंने कला में अपनी दिलचस्पी बनाए रखी। मैंने स्टेला मारिस कॉलेज, चैन्नई के ललित कला विभाग में दाखिला लिया जहाँ से मैंने हिस्ट्री ऑफ आर्ट, ड्राइंग एण्ड पेन्टिंग विषय के ऑनर्स पाठ्यक्रम की स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण की।

विवाह के बाद मैं कोलकाता आ गई और जल्दी ही मैंने बच्चों को कला सिखाना शुरू कर दिया। शिक्षण का काम करना पहले से सुविचारित योजना का हिस्सा नहीं था, बल्कि यह तो संयोगवश हो गया। मुझे याद है, जब कुछ मित्रों ने दीवारों पर टंगी मेरी बनाई कलाकृतियाँ देखीं तो उन्होंने जोर देकर कहा कि मुझे शिक्षण कार्य करना चाहिए–सम्भवत: उनके बच्चों को पढ़ाने से इसकी शुरुआत हो सकती है। मैं इसके लिए तैयार नहीं थी, बल्कि इस बात का काफी विरोध किया मगर अन्त में मान गई। शुरुआत में मुझे बहुत घबराहट महसूस हुई लेकिन बच्चों की प्रतिक्रिया ने मुझे हैरान कर दिया और खुश भी।

कला रचनात्मकता और विचार को बढ़ावा देती है: बच्चे स्वाभाविक तौर पर ग्रहणशील और संवेदनशील होते हैं। जब उनका ध्यान किसी विवरण की ओर दिलाया जाता है और उत्प्रेरकों के सम्पर्क में लाया जाता है तो वे उन्हें उसी रूप में पुन: रच पाते हैं जिस रूप में उन्हें देखते हैं।

युवा कला के अपने काम की उपलब्धियों को देखकर आत्मविश्वास हासिल करते हैं और प्रसन्न भी होते हैं।

उदाहरण के लिए, कुछ अरसा हुआ हम कक्षा में विश्वस्तर पर मौजूद बेचैनी और आतंक की बात कर रहे थे। बच्चों ने चित्रकला के माध्यम से अपनी भावनाएँ व्यक्त कीं। उनकी कृतियाँ विचारोत्तेजक और प्रत्येक की व्यक्तिगत छाप छोड़ने वाली थीं।

इसी प्रकार बच्चों ने एक पेशेवर कथक नृत्यांगना को देखकर उनका चित्र बनाया।







यहाँ पर दी गई कृतियों में स्पष्ट तौर पर झलक रहा है कि किस प्रकार प्रारम्भिक उत्प्रेरण के बाद बच्चों की रचनात्मकता बह निकली और एक विषय को विकसित करने की क्षमता भी इनमें प्रदर्शित हो रही है।

मैं रंग के इस्तेमाल की बात भी रखना चाहूँगी। शुरुआती उम्र से ही बच्चे विभिन्न रंगों को विभिन्न भावनाओं के साथ सम्बद्ध करने लग जाते हैं। मसलन, लाल को क्रोध के साथ, सफेद को शान्ति के साथ, पीले और नारंगी रंगों को गरमियों के साथ और नीले तथा हरे रंग सर्दी के मौसम के साथ। उनमें सह–सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता विकसित होती है।

कला अकसर युवा कल्पना के लिए एक उत्प्रेरक का काम करती है। हम तो चित्रकार और लेखक के बीच अन्तर करते हैं। लेकिन बच्चे बहुत बार एक चित्र को पूरा करने के लिए अपनी ही एक कहानी गढ़ लेते हैं: "यह छोटी बच्ची अपनी माँ का इन्तजार कर रही होगी.... शायद उसका चेहरा चिन्तित इसलिए दिख रहा है कि क्योंकि वह खतरा देख पा रहा है...।"

छोटे बच्चों को अपनी ही कल्पना का कोई पात्र या जानवर रचने में, उसे नाम देने में, जहाँ तक सम्भव हो उसे यथार्थवादी बनाने में, आनन्द आता है।

अचेतन मन को काम में लाया जाता है। मशहूर अतियथार्थवादी कलाकारों की रचनाओं का अध्ययन करने के बाद बच्चों ने मानव स्वभाव की अतियों, उसके छोरों को दर्शाया, उनका प्रतिनिधित्व किया। अकसर बच्चों को अपने स्वप्न याद करना और उन्हें कागज पर लाने में मजा आता है।

कला गति को कैद करती है। इसका एक मुख्य उदाहरण फिल्मों में देखने को मिलता है। शुरू में चित्रांकन होता था और फिर पिक्चरों को गति में लाया जाता था। इसी प्रकार बच्चों को कैनवस पर हवा को कैद करने को कहा गया और इस प्रकार उनमें देखने के साथ–साथ महसूस करने का एहसास भी जागा।

शिक्षक के तौर पर मेरे अनुभव को ध्यान में रखते हुए मैं कुछ तकनीकें और मशवरे साझा करना चाहूँगी जो मैंने बच्चों के साथ उनके चित्रों की प्रदर्शनी 'कलर्स ऑफ इनोसेन्स' के दौरान अपनाए।

मेरी कक्षाएँ इस विचार के साथ चलाई जाती हैं कि बच्चों को अपनी मन–मर्जी करने दी जाए। कुछ दिशानिर्देश दिए जा सकते हैं जिनका मकसद बस यह हो कि बच्चों को प्रभावशाली रचना करने में मदद मिल पाए।

उन्हें स्वयं सोचने–विचारने को कहा जाता है, नकल करने को नहीं। कला के पुराने उस्तादों का अध्ययन किया जाता है और उनके विषय की बजाए उनकी तकनीकों का अनुकरण करने को प्रोत्साहित किया जाता है।

समूह कार्य के साथ–साथ कल्पना की शुरुआत की जाती है।

उदाहरण के लिए, हमारी एक पाठ–योजना में बच्चों ने काल्पनिक पात्र रचे और उनके चित्र बनाए। वे इससे एक कदम आगे तक गए और उन्होंने अपने पात्रों की ही तरह कपड़े भी पहने। बाद में इन काल्पनिक पात्रों पर आधारित कहानी बनाकर उसे नाटक के रूप में खेला।

इसके साथ ही उन्हें अन्य कलाकारों की कलाकृतियाँ दिखाई जाती हैं: पुस्तकों, इंटरनेट या प्रदर्शनियों के माध्यम से। उन्हें इन सबसे विचार लेकर अपने काम में प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

उन्हें प्रेरित किया जाता है कि कक्षा में या बाहर जो कुछ भी अच्छा लगा उसका रेखाचित्र बना लें या उसके बारे में कुछ लिख लें।

सीखने का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष अपनी रचना की समीक्षा करना भी है। बच्चों को अपने किए काम के बारे में बात करने को कहा जाता है–उसमें उन्होंने क्या दिखाया है, उसके पीछे के विचार क्या हैं, उनके द्वारा किया गया रंगों का प्रयोग कैसा है। यह एक तरह का खुला मंच होता है जिसमें कोई भी बच्चा बेहतरी के लिए सुझाव दे सकता है या जो अच्छा लगा उसकी सराहना कर सकता है।



तीन साल के बच्चे द्वारा बनाया गया गर्म दिन का एक चित्र

इस लेख के सब पाठकों को मेरी सलाह है कि वे एक बात का ध्यान रखें – सृजनात्मकता को पोषित किया जाना चाहिए; उसे संचालित नहीं किया जाना चाहिए बल्कि विकसित होने की छूट मिलनी चाहिए। रेखाचित्र बनाने या चित्रकारी का कोई भी पूर्ण रूप से सही तरीका नहीं है और मार्गदर्शक के तौर पर हमारा उद्देश्य होना चाहिए कि प्रत्येक बच्चा अपनी व्यक्तिगत शैली बना सके, वह अपनी कला के बारे में ही नहीं, स्वयं अपने बारे में भी आत्मविश्वास में रहे। यह आत्मविश्वास तब ही आ सकता है जब उन्हें किसी प्रकार की डाँट–फटकार का डर न हो, और वे रंगों, माध्यम और विषय के चयन के बारे में स्वयं निर्णय भी ले रहे हों।

बच्चों के दिन–प्रतिदिन के जीवन में कला की भूमिका को और अधिक समझने के लिए आइए देखें कि कुछ माता–पिता का क्या कहना है। मैं आठ साल की एक बच्ची की माँ, श्रीमती संगीता गुप्ता की बात को उद्धृत करना चाहूँगी:

"हम मात्र दो साल के बच्चे के हाथ में चाक–बत्ती थमा देते हैं। मेरे ख्याल में छोटी उम्र में ही औपचारिक कला–कक्षाओं का बच्चों के विकास पर सकारात्मक और लम्बे दौर तक रहने वाला प्रभाव पड़ता है। मेरी बच्ची ने चार–पाँच साल की उम्र में दीपशिखा की कला–कक्षाओं में जाना शुरू किया था और आज जब वह आठ साल से ऊपर की हो चुकी है, मैं उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर इन कला–कक्षाओं की छाप साफ तौर पर देख सकती हूँ।

उसके लिए किसी भी चीज का चित्र बनाना एक स्वाभाविक गतिविधि है। उसमें त्रुटिहीन सम्पूर्णता चाहे न हो, उसके ब्रश के स्ट्रोक आत्मविश्वास से भरे होते हैं, और वह कुछ भी बनाने के लिए हरदम तैयार रहती है। वह इंटरनेट से तस्वीरें डाउनलोड करके चिपकाने की बजाए स्वयं चित्र बनाना पसन्द करती है।

बहुत ही दक्षता से उसमें विचारों की स्वतंत्रता भी पोषित की गई है। यह बात उसके बनाए चित्रों में ही नहीं झलकती, जो कभी एक से नहीं होते, बल्कि अपनी उम्र के मुताबिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में भी जाहिर होती है।

एक और स्थायी बात जो मैंने उसमें देखी है, वह है रंगों का प्रभाव और छाप। वह चित्रों में ही नहीं बल्कि अपने पहनावे में, अपने लिए चुनी गई अन्य चीजों में भी रंगों के बारे में बहुत आत्मविश्वासी और सहज है।

***'कला' के माध्यम से मेरी बेटी का ढलना एक निरन्तर स्थायी प्रक्रिया है,** और उसकी कला–अध्यापिका के तौर पर दीपशिखा की इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका है।"*

एक अन्य अभिभावक श्रीमती नीतिका स्वरूप का कहना है:

"एक बच्ची जो कुछ भी बनाना नहीं चाहती थी अब रेखाचित्र बनाना, रंग भरना पसन्द करती है। चित्रों की भाषा अब उसके रोज के जीवन का हिस्सा बन गई है। एक पक्षी के रंग की सुन्दरता, बगीचे के फूल, यहाँ तक कि किसी इमारत का ढाँचा मेरी बेटी का जैसे हिस्सा ही बन गए हैं। आज के जानकारी प्रधान युग में सृजनात्मकता का अत्यधिक महत्त्व है–प्रेरित और उत्साहित होना लाजिमी है और मैंने यह सब सिद्धिका के अस्तित्व का हिस्सा बनते देखा है।"

व्यवहार में आने वाले कुछ परिवर्तनों की ओर मैं इशारा करना चाहूँगी। कई बार बच्चे अपने खोल में से निकल आते हैं; जो बहुत ही शर्मीले होते हैं वे बोलने लगते हैं और कक्षा में अपनी कला के बारे में चर्चा भी करते हैं। इसके अलावा नए विचारों के मुताबिक खुद को ढालने का खुलापन और पहले के बने–बनाए विचारों से बाहर निकलने की भी उत्प्रेरणा मिलती है।

मैं इस लेख को कन्फ्यूशियस के इन शब्दों के साथ समाप्त करना चाहूँगी, जो इन्सान के जीवन में कला की भूमिका की सबसे बेहतर व्याख्या कहे जा सकते हैं :

"मैं सुनता हूँ, भूल जाता हूँ।
मैं जो देखता हूँ, याद रखता हूँ।
मैं करता हूँ, समझ जाता हूँ।"

***दीपशिखा खैतान** कार्यरत कलाकार हैं। कोलकाता में रहती हैं। वे कला को समझने में बच्चों की मदद करती हैं और उनमें उसके इतिहास की समझ भी बनाती हैं। उनके विद्यार्थियों की पहली प्रदर्शनी 'कलर्स ऑफ इनोसेन्स' को बहुत सराहा गया। पुस्तकों के आवरण डिजाइन करना उनकी रुचि है। उनके बनाए आवरण वाली नवीनतम पुस्तक 'ब्रिजिज़' शीर्षक से शिवसंकरी द्वारा प्रकाशित की गई। उनसे* khaitandk@gmail.com *पर सम्पर्क किया जा सकता है।*
***अनुवादः** रमणीक मोहन*